किसान अधिनियम एवं किसान

भारत सरकार द्वारा कृषि के क्षेत्र में क्रियान्वित किए गए तीनों अधिनियम, कृषक उत्पाद वाणिज्य एवं व्यापार अधिनियम 2020 किसान सशक्तिकरण एवं संरक्षण मूल्य आश्वासन अधिनियम 2020 एवं आवश्यक वस्तु अधिनियम संशोधन 2020 का मुख्य उद्देश्य किसानों को उसके उत्पाद का उचित मूल्य दिलाना एवं उपभोक्ता व्यवसायी, उद्योग धंधों से सीधे किसान से सामान खरीदकर उसकी गुणवत्ता संरक्षित करते हुए पोस्ट हार्वेस्ट लासेस को कम करना है।

उक्त अधिनियमों के बाद जिस तरह कुछ किसान आन्दोलित हैं। यह इंगित करता है कि पूरे देश के146 मिलियन से अधिक किसानों के हितों की रक्षा के बारे में जाति निर्माताओं को नये सिरे से विचार करना चाहिए। सरकार द्वारा किए गए व्यय के आंकड़ों को विश्लेषित किया जाए तो स्पष्ट है कि वर्ष 2020–21 में उर्वरक सब्सिडी 1,33947 करोड़ रुपये, खाद्य सब्सिडी 4,22,618 करोड़ रुपये, गेहूं के खरीद पर 75000 करोड़ रुपये, धान की खरीद पर 1,72,752 करोड़ रुपये, खर्च किए गए जबकि किसान सम्मान निधि में किसानों को दी जाने वाली धनराशि पर मात्र 65000 करोड़ रुपये खर्च हुए। इससे स्पष्ट है कि गेहूं और धान की खरीद पर खर्च होने वाली धनराशि किसान सम्मान निधि से चार गुने से अधिक है जिसका लाभ उत्तरी भारत के ही कुछ किसान ले पाते हैं। देश में उत्पादित होने वाले 320 मिलियन टन से अधिक हार्टिकल्चर उत्पादों में से किसी का समर्थन मूल्य नहीं घोषित होता है और उसके मूल्यों में भी उतार–चढ़ाव अधिक होता है। अतः पूरे देश के किसानों को लाभ पहुंचाने के लिए सब्सिडी का पुनर्निधारण करते हुए किसान सम्मान निधि में अधिक धनराशि आवंटित करने की आवश्यकता है जिससे कि देश के समस्त किसानों का समावेशी रूप में सहायता हो सके। सीमान्त–लघु एवं फल सब्जी उत्पादकों को भी लाभ पहुंचाने के लिए पूरी विपणन व्यवस्था में आमूल–चूक परिवर्तन की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय स्तर पर औसत जोन का आकार 1.08 हेक्टेयर है, पूर्वी उत्तर प्रदेश के जनपदों में 93 प्रतिशत से अधिक किसान सीमान्त और लघु श्रेणी में हैं। अतः किसानों को उत्पादन संगठन (एफ.वी.ओ.) बनाने हेतु जागरूक और प्रेरित करना चाहिए और इन उत्पादक संगठनों को सीधे उद्योगों एवं व्यवसायियों से जोड़ना चाहिए। शहरों में बढ़ रही हाउसिंग सोसाइटी भी अवसर प्रदान करती हैं जहां एक ही सोसाइटी में 200 से अधिक फ्लैट/परिवार रहते हैं वहां सीधे तौर पर एफ.पी.ओ. के लिए बाजार प्रदान करने से उपभोक्ता एवं उत्पादक दोनों को लाभ होगा।

अतः वर्तमान कृषि अधिनियमों का समुचित लाभ उठाने के लिए एफ.पी.ओ. का गठन उसका बाजार में सीधे सम्बन्ध स्थापित कराना होगा तथा किसान सम्मान निधि के माध्यम से किसानों की आय समर्थन योजना को सुदृढ़ करते हुए किसानों को लाभ पहुंचाया जा सकता है।

– राकेश सिंह
विभागाध्यक्ष, कृषि अर्थशास्त्र विभाग,
कृषि विज्ञान संस्थान, का.ही.वि.वि., वाराणसी

शून्य बजट प्राकृतिक खेती

जीरो बजट प्राकृतिक खेती, जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, खेती की एक ऐसी विधि है जहाँ पौधों को उगाने और कटाई की लागत शून्य है। इसका मतलब है कि किसानों को फसलों के स्वस्थ विकास को सुनिश्चित करने के लिए उर्वरक और कीटनाशक खरीदने की आवश्यकता नहीं है। शून्य बजट प्राकृतिक खेती (ZBNF) पारंपरिक भारतीय प्रथाओं से रासायनिक मुक्त कृषि की एक विधि है।

यह मूल रूप से महाराष्ट्रीयन कृषक और पद्म श्री प्राप्तकर्ता सुभाष पालेकर द्वारा प्रचारित किया गया था, जिन्होंने इसे 1990 के दशक के मध्य में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों और गहन सिंचाई द्वारा संचालित हरित क्रांति के तरीकों के विकल्प के रूप में विकसित किया था। उन्होंने तर्क दिया कि इन बाहरी आदानों की बढ़ती लागत किसानों के बीच ऋण और आत्महत्या का एक प्रमुख कारण था, जबकि पर्यावरण पर रसायनों का प्रभाव और दीर्घकालिक प्रजनन क्षमता विनाशकारी थी। इन आदानों पर पैसा खर्च करने की आवश्यकता के बिना या उन्हें खरीदने के लिए ऋण लेने की आवश्यकता नहीं है। उत्पादन की लागत को कम किया जा सकता है और खेती को शून्य बजट, अभ्यास में बनाया जा सकता है, जिससे कई छोटे किसानों के ऋण चक्र को तोड़ा जा सकता है।

शून्य बजट प्राकृतिक खेती के चार स्तंभ

1. जीवामृतः जीवामृत एक किण्वित माइक्रोबियल संस्कृति है। यह पोषक तत्व प्रदान करता है, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण, एक उत्प्रेरक एजेंट के रूप में कार्य करता है जो मिट्टी में सूक्ष्म जीवों की गतिविधि को बढ़ा देता है, साथ ही साथ केंचुआ की गतिविधि को बढ़ाता है। 48 घंटे की किण्वन प्रक्रिया के दौरान, गाय के गोबर और मूत्र में मौजूद एरोबिक और एनारोबिक बैक्टीरिया कई गुना बढ़ जाते हैं क्योंकि वे जैविक सामग्री (जैसे दाल का आटा) खाते हैं। रोगाणुओं और जीवों की देशी प्रजातियों के टीकाकरण के रूप में तैयारी में मुट्ठी भर अविरल मिट्टी भी डाली जाती है। जीवामृत कवक और जीवाणु पौधों की बीमारियों को रोकने में भी मदद करता है। पालेकर का सुझाव है कि जीवामृत केवल संक्रमण के पहले 3 वर्षों के लिए आवश्यक है, जिसके बाद प्रणाली आत्मनिर्भर हो जाती है।